कैसे बचेंगे हिमालय के परम्परागत जल स्रोत

एस. एस. सैनी

जो हिमालयी क्षेत्र कभी पानी के साफ और प्राकृतिक पोषक तत्वों से भरपूर स्रोतों का भंडार रहा है वहाँ के गर्म पानी के स्रोते, गंधक युक्त पानी के लिए स्रोते लोगों की पीने के साथ ही नहाने, धोने, पशुओं को पानी पिलाने के लिए जाने जाते थे, वह अब सूखने के कगार पर पहुँच रहे हैं। अब इन्हीं कस्बों से लेकर गाँवों व नगरों में बोतलबंद पानी की पेटियाँ लोगों की प्यास बुझा रही हैं। मैदानी इलाकों में जब पानी के निजीकरण की बयार चली तो पहाड़ भी इससे अछूते नहीं रह सके। हिमालय में प्राकृतिक संसाधनों का सर्वाधिक क्षरण अवैज्ञानिक दोहन से ही हुआ है। इससे उत्पन्न चुनौतियों में पानी की समस्या ही सबसे बड़ी नजर आ रही है। विशेषज्ञ अब इस जल संकट का समाधान जल प्रबंधन को ही मान चुके हैं। इसमें नदियों को आपस में जोड़ने से लेकर नदियों पर बड़े बाँध बना कर भारी भरकम जलाशयों का निर्माण, बाँध बना कर बिजली पैदा करने की परियोजनाएँ जैसे कृत्रिम उपाय ही मान लिये गये हैं।

एशिया के वॉटर टॉवर के रूप में मशहूर हिमालय पर्वत के जल संसाधनों पर बढ़ती आबादी व अन्य कारणों से जिस प्रकार से भारी दबाव बढ़ गया है, उसे झेलना न सिर्फ धरती, वरन प्रकृति और हिमालय जैसे विशाल पर्वत श्रृंखला के लिये भी मुश्किल होता जा रहा है। देश में पानी की 80 फीसदी जरूरत पूरी करने वाला हिमालय आज खुद प्यासा होकर रह गया है। गंगा से निकली अपर गंगा नहर, यमुना से निकली पूर्वी व पश्चिमी यमुना नहरें, पहाड़ी क्षेत्रों में नदियों से ही निकाली गई नहरें जहाँ मैदान की प्यास बुझाती हैं तो वहीं पर्वतीय जिलों की भी पानी की जरूरत पूरी करती आ रही हैं। हाल ही में उत्तराखंड अंतरिक्ष उपयोग केंद्र व एन.आई.एच. के साझा प्रयासों के फलस्वरूप हुई तीन दिवसीय कार्यशाला में भी विशेषज्ञों की चिंता का एक विषय यही था कि उत्तराखंड एवं हिमाचल के पहाड़ों में पारंपरिक एवं प्राकृतिक जल स्रोत सूख चुके हैं और जो बचे हैं वह भी सूखते जा रहे हैं। इन स्रोतों के सूखने से एक अनुमान के अनुसार दशक पहले तक उत्तराखंड एवं हिमाचल के करीब पांच हजार गांवों में लोगों के गले सूखने से जल संकट पैदा हो चुका था। वैज्ञानिकों ने जन भागीदारी के रूप में इन जल स्रोतों को बचाने की ठोस योजना शुरू करने पर बल दिया है।

हिमालय के जलस्रोतों की जब चर्चा होती है तो इसमें हिमनद, उनसे निकलने वाली सदानीरा नदियाँ प्राकृतिक झरने, झीलें, पोखर, तालाब, चाल एवं गधेरे सभी इस सूची में शामिल हो जाते हैं। हिमालय क्षेत्र के राज्यों में सूखते प्राकृतिक झरनों को इनके पूरे पेयजल की 80 फीसद जलापूर्ति का आधार आज भी माना जाता है। पर्यावरणविदों ने हाल में ही हुए एक सम्मेलन में स्थानीय

भाखड़ा नांगल बाँध-देश की सबसे बड़ी बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना

हिमालय में बने प्राकृतिक जल स्रोत धीरे-धीरे सूखने की कगार पर

जनभागिता की मदद से इन झरनों को पुनर्जीवित करने में उनके वैज्ञानिक प्रबंधन की जरूरत बताई है। स्थानीय जनों में पर्यावरणविद् उन लोगों को शामिल करते हैं, जो झरनों के आस-पास रहते हैं। देश की नदियों के भी प्रमुख जल स्रोत झरनों को ही मानते हुए पर्यावरणविद् कहते हैं कि ऐसे सूखते झरनों को पुनर्जीवित करने व उनके प्रबंधन की वैज्ञानिक प्रणाली तैयार की जानी आवश्यक हो गई है। पर्यावरणविद् ही नहीं अब तो वैज्ञानिक भी झरनों को पहाड़ों की जीवनरेखा मानने लगे हैं। एक जानकारी के अनुसार सिक्किम में डेढ़ हजार से अधिक सूखने के कगार पर पहुंच चुके झरनों को पुनर्जीवित करने की योजना जोरदार ढंग से शुरू की गई है, और इनमें से 52 को पुनर्जीवित कर विकसित करने का काम पूरा कर लिया गया है। एक अनुमान के अनुसार भारत के हिमालयी क्षेत्र में पाँच लाख झरने हैं, माना जा सकता है कि इतनी बड़ी तादाद में छोटे-बड़े झरने का होना अपने आप में पहाड़ों की जीवन रेखा ही है। हिमालय सेवा संघ नामक एक गैर-सरकारी संगठन के अनुसार हाल के समय में जमीन के उपयोग में आये बदलावों, पर्यावरण को हुए नुकसान, व जलवायु परिवर्तन से भी पारंपरिक जल स्रोत-झरनों के अस्तित्व पर भी खतरा मंडरा रहा है। संगठन के संयोजक मनोज पांडे के अनुसार इन झरनों को संरक्षित किया जाना हिमालय को बचाने की दिशा में एक प्रमुख काम होगा।

हिमालय के परपंरागत जल स्रोतों के सूखने के कुछ कारणों की पड़ताल किये जाने पर उनमें से कुछ प्रमुख कारणों का उल्लेख आलेख में किया जा रहा है।

वैज्ञानिकों के अनुसार हिमालयी क्षेत्र के पर्वतीय राज्यों में अवैज्ञानिक विकास कार्य ही पारंपरिक जल स्रोतों के सूखने का एक बड़ा कारण है। लोक निर्माण विभाग, बी.आर.ओ. आदि निर्माण में लगी एजेंसियों ने पहाड़ों को काट कर सड़कें तो बना दी, लेकिन उनके द्वारा पहाड़ तोड़ने व काटने के लिये किये गये ब्लास्ट व सड़कों से जल स्रोतों के प्रवाह मार्ग बंद और अवरूद्ध होने से वह धीरे-धीरे करके सूखते गये। वैज्ञानिकों का कहना है कि एक बार मार्ग अवरूद्ध होने के बाद चश्मों का पानी पहाड़ में भीतर ही भीतर कहाँ-कहाँ तक फैला और कहां जाकर निकला, इस तरफ सरकार या किसी एजेंसी अथवा एन.जी.ओ. का ध्यान गया ही नहीं। यही वजह है कि एक बार जो जो जल स्रोत या प्राकृतिक चश्मा सूख गया या बंद हो गया, उसको पुनर्जीवित करना संभव ही नहीं हो सका।

नदियों पर बनी बाँध परियोजनाएँ

हिमालय क्षेत्र में सैकड़ों छोटी-बड़ी नदियाँ बह रही हैं। आजादी के बाद देश के प्रथम प्रधानमंत्री विकसित देशों सोवियत रूस व अमेरिका आदि के नदी घाटी परियोजनाओं के आधार पर भारत में इनकी शुरूआत हुई। हिमालय में पहला बाँध भाखड़ा नांगल डैम के रूप में सामने आया। इसके बाद दामोदर नदी घाटी परियोजना व रिहंद बाँध परियोजनाएं मध्य भारत में बनी। सातवें दशक में मध्य हिमालय में ही टिहरी बाँध बनाने की योजना पर अमल शुरू हुआ। बांध बनने से पहले ही इसका भूकंपीय और डूब क्षेत्र के निवासियों के विस्थापन पर्यावरण क्षरण व प्राकृतिक जल धाराओं को बाँधने के आधार पर विरोध शुरू हो गया था। लेकिन तमाम लड़ाईयों के बावजूद बाँध का निर्माण पूरा होकर उसमें 2006 में बिजली उत्पादन भी शुरू हो सका था। 42 वर्ग किमी. क्षेत्र में फैली टिहरी झील के नुकसान का शतप्रतिशत आकलन किया जाना संभव नहीं है। लेकिन उसके बनाने में आस-पास के सैकड़ों गांवों के विस्थापन से लेकर उनके प्राकृतिक जल स्रोत डूब क्षेत्र में आने से नष्ट हो गये। भूस्खलन की समस्या ने भी इसमें अहम भूमिका निभाई है। इसी की देखा-देखी उ.प्र. के विभाजन से पूर्व ही भागीरथी, अलकनंदा, मंदाकिनी, भिलंगना, यमुना, शारदा, काली गंडक, राम गंगा आदि नदियों पर लगभग 700 छोटी बड़ी बांध परियोजनाएँ स्वीकृत हैं, अनेक पर काम चल रहा है। परियोजनाएं बनाने में पहाड़ तोड़ने के लिये प्रयुक्त होने वाले डायनामाईट के प्रयोग से पहाड़ों में दरारें पड़ना स्वाभाविक ही है। इससे पहाड़ कमजोर होने का सिलसिला शुरू हुआ, यह भी प्राकृतिक जल स्रोतों के सूखने का बड़ा कारण बना है।

सदानीरा नदियाँ बनी सूखती जलधारायें

दुनिया का इतिहास इस बात का गवाह है कि तमाम बड़ी सभ्यतायें नदियों के किनारे ही विकसित हुई। वजह है कि आदमी की पहली जरूरत पानी है। पानी से पृथ्वी पर जीवन के पनपने और विकास की बात स्वतःसिद्ध है। इसलिये जब हम हिमालय क्षेत्र की बात करते हैं तो पता चलता है कि इस क्षेत्र में भी 40 फीसदी गांव तो नदियों के ही किनारों पर बसे हैं। लेकिन नदी घाटियों का परिस्थितिकी तंत्र परियोजनाओं व अन्य कारणों से इतना बिगड़ चुका है कि नदियों में पानी की धार ही खत्म होती लग रही हैं। ऊपर से बड़ी नदियों-विशेष कर भागीरथी अलकनंदा आदि को सुरंगों में बाँधने का प्रयास तो इनके दर्शन ही दुलर्भ कराने में प्रमुख भूमिका निभा रहा है। उत्तराखंड बनने के बाद से राज्य सरकार ने उत्तराखंड को ऊर्जा प्रदेश का नारा क्या दिया, दर्जनों रन ऑफ रिवर परियोजनाओं को बड़े बाँधों

के विकल्प मान कर काम शुरू किया गया। लक्ष्य तय किया कि राज्य में 25 हजार मेगावाट पन बिजली की उत्पादन क्षमता का दोहन किया जायेगा। इससे ही राज्य को ऊर्जा प्रदेश बनाने का नारा सार्थक सिद्ध होगा। बिजली को प्रदेश के विकास की एक अहम कड़ी माना गया। लेकिन यही रिवर प्रोजेक्ट्स नदियों को सुरंगों में बांधने की प्रक्रिया बन गई है। हिमनदों को नदियों के उद्गम के साथ ही हिमालय के सबसे बड़े जलस्रोतों के रूप में माना जाता है। पिछले दिनों ऐसी वैज्ञानिक अध्ययन आधारित रिपोर्ट आई जिनमें हिमालय क्षेत्र के हिमनदों के पिघलने व सिकुड़ने या पीछे हटने की बातें कही गई, इनके दावे भी किये जाते रहे। लंदन से छपी ऐसी ही एक रिपोर्ट के अनुसार धरती का तापमान बढ़ने, समुद्र का जल स्तर बढ़ने का दुष्परिणाम हिमालय के ग्लेशियरों के खात्मे के रूप में सामने आयेगा। विशेषज्ञों का कहना है कि ये ग्लेशियर दुनिया के दूसरे ग्लेशियरों की अपेक्षा कहीं अधिक तेजी से पिघल रहे हैं, निकट भविष्य में तेजी से पिघल कर ग्लेशियर स्थायी जलाशयों की जगह ले सकते हैं, इससे इनसे निकलने वाली गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र में जल प्रवाह बढ़ेगा, ये जल बह कर तेजी से समुद्रों में जाने से उनका भी जलस्तर बढ़ेगा। यह स्थिति समुद्र किनारे के छोटे देशों, टापुओं को डुबाने का काम करेगा। भारत समेत पाकिस्तान, नेपाल, व एशियाई देशों में वाहन जनित, परपंरागत घरेलू ईंधन व ईंट भट्टों के प्रदूषण से वातावरण में ब्लेक कार्बन की मात्रा बढ़ती जा रही है, यह ऊपर उठ कर हिमालय के ग्लेशियरों पर एक ऐसी परत के रूप में जमने लगी है जो सूर्य की गर्मी को अधिक मात्रा व जल्दी सोखती है, यही कार्बन कण ग्लेशियरों को पिघलाने में भूमिका निभा रही है।

हिमालय का एक प्राकृतिक विज्ञान यह भी है कि झरनों का पानी बह कर एक के बाद दूसरे चश्मों के पानी से निकल कर छोटी-छोटी जलधारा बन कर बड़ी नदियों में मिलता है। यह एक प्राकृतिक प्रक्रिया

पहाड़ों में निर्वनीकरण के चलते भू-स्खलन की घटनाएं बढ़ रही हैं

है। हिमालय क्षेत्र में ऐसे गांव हैं जो नदियों से महज 50-60 कदमों की दूरी पर स्थित हैं या कुछ ज्यादा। लेकिन नदियों में जल प्रवाह नहीं के बराबर रहने से इन गाँवों में भी पीने के पानी का संकट गहरा गया है। इन गांवों के बाशिंदे बर्तन उठा कर कई-कई मील दूर पैदल जाकर पीने का पानी ढोने को अभिशप्त हो चुके हैं।

जो हिमालयी क्षेत्र कभी पानी के साफ और प्राकृतिक पोषक तत्वों से भरपूर स्रोतों का भंडार रहा है वहाँ के गर्म पानी के सोते, गंधक युक्त पानी के सोते लोगों की पीने के साथ ही नहाने, धोने, पशुओं को पानी पिलाने के लिये जाने जाते थे, वह अब सूखने के कगार पर पहुँच रहे हैं। अब इन्हीं कस्बों से लेकर गांवों व नगरों में बोतलबंद पानी की पेटियाँ लोगों की प्यास बुझा रही हैं। मैदानी इलाकों में जब पानी के निजीकरण की बयार चली तो पहाड़ भी इससे अछूते नहीं रह सके। हिमालय में प्राकृतिक संसाधनों का सर्वाधिक क्षरण अवैज्ञानिक दोहन से ही हुआ है। इससे उत्पन्न चुनौतियों में पानी की समस्या ही सबसे बड़ी नजर आ रही है। विशेषज्ञ अब इस जल संकट का समाधान जल प्रबंधन को ही मान चुके हैं। इसमें नदियों को आपस में जोड़ने से लेकर नदियों पर बड़े बाँध बना कर भारी भरकम जलाशयों का निर्माण, बाँध बना कर बिजली पैदा करने की परियोजनाएं जैसे कृत्रिम उपाय ही मान लिये गये हैं।

प्राकृतिक आपदायें

उत्तराखंड समेत हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर, से लेकर सिक्किम, असम, अरूणाचल प्रदेश मणिपुर, त्रिपुरा व मेघालय आदि हिमालयी राज्यों में भूकंप, भूस्खलन, बाढ़, बादल फटना आदि प्राकृतिक आपदायें भी पर्वतीय जल स्रोतों को नष्ट करने का काम कर रही हैं। आपदाओं की बढ़ती पुनरावृत्ति से यह दर बढ़ी है। 2013 की केदारघाटी, बद्रीनाथ क्षेत्र से लेकर पिथौरागढ़ क्षेत्रों में भारी बारिश जनित जल प्रलय ने प्राकृतिक जल स्रोतों को बहुत नुकसान पहुंचाया है। इन नष्ट हुए स्रोतों में से अधिकांश को पुनर्जीवित ही नहीं किया जा सका है। इससे प्रदेश में जल संकट बढ़ा है। इसी तरह बार-बार आने वाले भूकंपों से भी पहाड़ों का भूगोल बदलने का प्रत्यक्ष असर प्राकृतिक जल स्रोतों पर पड़ रहा है। राज्य में चारधाम यात्रा के केन्द्र बिंदु गंगोत्री, यमुनोत्री, केदारनाथ, बद्रीनाथ व हेमकुंट साहिब तीर्थ 3 हजार मीटर से अधिक की ऊंचाई पर स्थित होने से ग्लेशियरों के निकट हैं। इन धामों पर ही पर्यटन समेत राज्य की आधी आबादी की आर्थिकी टिकी हुई है। यहाँ अब प्राकृतिक जल स्रोतों से नहीं वरन बोतलबंद पानी की सप्लाई हिमालय का मुँह चिड़ाती नजर आती हैं।

अंग्रेजों की व्यावसायिक नीतियां

ब्रिटिशकाल में पर्वतीय इलाकों में पहुंचे अंग्रेजी शासकों ने पर्वतीय वन संपदा का दोहन शुरू किया था, यह चक्र आज भी जारी है। अब से करीब 150 साल पहले अंग्रेजों ने यहाँ के प्राकृतिक वनों का सफाया करके व्यापारिक उपयोग को ध्यान में रख कर चीड़ जैसे विदेशी पेड़ों के जंगल बसाने का काम शुरू किया था। इस प्रजाति के जंगल पर्यावरणीय लिहाज से उपयोगी नहीं होते। छोटी जड़ें होने से इनकी जलसंग्रहण क्षमता बहुत

कम होती है, जमीन को थामने की भी क्षमता बहुत कम होती है इसके साथ ही इसकी सूखी पत्तियाँ वनाग्नि को भड़काने में अहम भूमिका निभाती है। इसके जंगलों के प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष नुकसान का आकलन करने से यही पता चलता है कि उनके दूरगामी प्रभाव जंगलों के प्राकृतिक स्रोतों को नष्ट करने में भूमिका निभा रहे हैं।

दावानल

वर्षा और जंगलों का प्रत्यक्ष संबंध प्राकृतिक आधार पर होता है। बढ़ते मानवीय दखल और कटते जंगलों से हिमालयी क्षेत्र में वनाग्नि का प्रकोप भी लगातार बढ़ता जा रहा है। इससे हर साल लाखों हेक्टेयर जंगल समेत वनस्पितियां, जीव जंतु खत्म होने का सिलसिला जारी है। जंगलों की आग से यह सब खत्म होने से इलाके के पारिस्थितिकी तंत्र भी प्रभावित हो रहा है। सूखे और जले पहाड़ों से जल स्रोत के सूखने की प्रक्रिया चलती है। वन विभाग और सरकार जन सहयोग से वनाग्नि को रोकने व नियंत्रित करने की योजनाएँ बनाती हैं, लेकिन इसमें कामयाब नहीं हो पाती। संयुक्त वन प्रबंधन जैसी योजनाएँ कारगर नहीं हो पा रही हैं। इससे हर साल जल स्रोतों को सुखाने वाली यह आपदा जल संकट का एक बड़ा कारण बन रही है।

भूस्खलन

पहाड़ों में विस्फोटों से बनी दरारों में बरसात में पानी भरने से भूस्खलन की बड़ी समस्या सामने आई है। आई.आई.टी. रुड़की के भूस्खलन वैज्ञानिक डॉ. आर.एन. बालागन के अनुसार इससे न सिर्फ हिमालय से निकलने वाली नदियों के अस्तित्व पर खतरा पैदा हुआ बल्कि प्राकृतिक चश्मों के अस्तित्व के लिये भी भूस्खलन एक बड़ा खतरा सिद्ध हो चुके है। भारी बरसात में भूस्खलन से प्रायः नदियों के प्रवाह अवरूद्ध होने से नदियों में मलबा आने से झीलें बनने और उनसे बाढ़ आने का नया खतरा पैदा होने लगा है। इस बाढ़ की चपेट में आने वाले तमाम जल स्रोत नष्ट होते हैं या

हिमालयी क्षेत्र में बढ़ता अनुचित मानवीय दखल भी वहां के जल स्रोतों को कमजोर करने व नष्ट करने में मुख्य भूमिका निभा रहा है। इससे परिस्थितिकी तंत्र नष्ट होना, जैव विविधता नष्ट होना, नदियों के कैचमेंट क्षेत्र में भूगर्भीय जल खत्म होना, नदियों पर बिजली परियोजनायें बनाना, सड़कों का निर्माण, जंगलों का अंधाधुंध कटान, पहाड़ों पर बढ़ते कंक्रीट के जंगल बढ़ते जाना जैसे मानवीय दखल ने हिमालय के स्वरूप में भारी बदलाव ला दिये हैं। इन सबका नकारात्मक असर जल भंडारों को प्रभावित कर रहा है और उन पर लगातार खतरा बढ़ता जा रहा है।

सूखने का सिलसिला जारी रहता है। आई.आई.टी. रुड़की के ही वैज्ञानिकों ने दशक भर पहले प्रदेश का भूस्खलन मानचित्र तैयार कर सरकार को उपलब्ध कराया था, इसके अनुसार भूस्खलन प्रबंधन योजना बनानी थी, इसमें वैज्ञानिकों को भूस्खलन का अर्ली वार्निंग विकसित करने में सफलता मिली है। भूस्खलन व अतिक्रमण से नैनीताल की सभी झीलों को बचाने का कार्यक्रम चलाया जा रहा है। झील के रीचार्ज क्षेत्रों में लोगों ने अतिक्रमण करके अवैध निर्माण करने का काम सफलतापूर्वक कर लिया है, ऐसी ही स्थिति नैनी झील के अलावा वहां की अन्य झीलों के साथ भी हुई है। जल विज्ञानियों ने झील विकास प्राधिकरण को अध्ययन के बाद जल स्रोतों को बचाने की संस्तुति की है।

अनुचित मानवीय दखल

हिमालयी क्षेत्र में बढ़ता अनुचित मानवीय दखल भी वहाँ के जल स्रोतों को कमजोर करने व नष्ट करने में मुख्य भूमिका निभा रहा है। इससे परिस्थितिकी तंत्र नष्ट होना, जैव विविधता नष्ट होना, नदियों के कैचमेंट क्षेत्र में भूगर्भीय जल खत्म होना, नदियों पर बिजली परियोजनायें बनाना, सड़कों का निर्माण, जंगलों का अंधाधुंध कटान, पहाड़ों पर बढ़ते कंक्रीट के जंगल बढ़ते जाना जैसे मानवीय दखल ने हिमालय के स्वरूप में भारी बदलाव ला दिये हैं। इन सबका नकारात्मक असर जल भंडारों को प्रभावित कर रहा है और उन पर लगातार खतरा बढ़ता जा रहा है।

भूगर्भीय जलधारण क्षमता में गिरावट

वैज्ञानिकों के अनुसार मानवीय दखल व अन्य गतिविधियों से हिमालय अपनी भूगर्भ जल धारण क्षमता खो रहा है। इसमें भारी ह्रास आ चुका है। कुमाऊं विवि के एक अध्ययन के अनुसार 6.5 दशक पहले तक हिमालय की जल धारण क्षमता 90 फीसदी तक थी। अब से 40 साल पहले यह 35 फीसदी तक घट चुकी थी। अब तो यह 10-12 फीसदी से भी कम होने का अनुमान है। मुख्यतः यह सारा बरसाती पानी ही होता था। भूगर्भीय जल धारण क्षमता घटने से नदियों में जल प्रवाह में कमी आई है। वैज्ञानिकों का कहना है कि कुल मिलाकर लगभग 88 फीसदी पानी बह कर मैदानों से होता हुआ समुद्र में वापस लौट जाता है। नदियों को भूगर्भीय जल भंडार ही जीवित रखते हैं, इनका सूखना नदियों के अस्तित्व के लिये खतरा बनता जा रहा है। अध्ययन के मुताबिक 50 साल पहले कुमाऊं मंडल की प्रमुख नदी कोसी का दायरा 225.6 किमी. था जो सिकुड़ कर 41.5 किमी. रह गया है। इसी प्रकार दूसरी छोटी-बड़ी नदियों का क्षेत्र भी घटने से वैज्ञानिक चिंतित हैं।

भूक्षरण की बढ़ती समस्या

जंगलों के अंधाधुंध कटान, प्राकृतिक जंगलों के घटते दायरे व चीड़ जैसे जंगलों के बढ़ते क्षेत्र में भूक्षरण की समस्या गहराई है। वैज्ञानिकों के अध्ययन के मुताबिक हिमालय का प्राकृतिक विज्ञान यह है कि ऊपरी इलाकों में चौड़ी पत्ती वाले जंगल, नीचे के इलाकों में छोटी झाड़ियाँ व बेलों का नेटवर्क, सड़ी पत्तियाँ और जंगली घास। बरसात में पानी इनमें अटक कर रिस कर जमीन में समाता है। यह पूरी प्रक्रिया ही प्राकृतिक विज्ञान कहलाती है, जिसकी बदौलत भूमि कटाव कम होता है और जमीन ज्यादा पानी सोखती है, यही पहाड़ों के भूगर्भीय भंडारों को रीचार्ज करता है। लेकिन वैज्ञानिकों के अनुसार अब हालात यह है कि वनाग्नि से नष्ट 65-70 फीसदी चीड़ व अन्य जंगलों में बरसात का पानी सीधा जमीन पर गिर कर भूमि क्षरण का कारण बन रहा है। इसका दोहरा नुकसान हो रहा है पानी का भंडारण कम हो गया है और उपजाऊ मिट्टी की परत को तेज पानी की धारा अपने साथ बहा कर नीचे ले जाती है जो गाद के रूप में तब्दील होकर नीचे समस्यायें पैदा कर रही हैं। आई.आई.टी. के जल संसाधन प्रबंधन एवं विकास विभाग के एक वैज्ञानिक प्रो. एस.के. त्रिपाठी का कहना है कि हिमालय के स्वस्थ जंगलों की जलधारण क्षमता विलुप्त सी हो कर रह गई है। यह घट कर 10-12 फीसदी तक आना चिंताजनक है। जनभागिता बढ़ा कर ही इसे पुनर्जीवित करना संभव है। उनका यह भी सुझाव है कि नदियों के सूखने की जिम्मेदारी उस क्षेत्र के लोगों पर तय होनी चाहिये। हिमालय के जल स्रोतों को बचाने के लिये उत्तराखंड में ही नहीं हिमालयी रिवर रिजुनेशन आथॉरिटी के गठन की भी आवश्यकता है।

देश की प्रमुख नदियों में से गंगा, सिंधु ब्रह्मपुत्र, रावी व्यास, यमुना आदि का उद्गम हिमालय से ही है। भारत की सभी नदियों में प्रवाहित होने वाले जल का लगभग 60 फीसदी पानी इन तीनों में ही बहता है, गंगा, सिंधु व ब्रह्मपुत्र पर ही देश के 11 बड़े बाँध भी बनाये गये हैं। इनमें करीब पौने दो सौ अरब घनमीटर पानी संग्रहित होने का अनुमान है। अन्य नदियों पर भी

जल संग्रहण क्षमता की परियोजनायें बनाई जा रही हैं। इससे साफ है कि इन नदियों में भारत की घरेलू जल आवश्यकता 25 अरब घन मीटर से भी कहीं अधिक जल उपलब्ध है। लेकिन इन जल स्रोतों को सहेजना आवश्यक है, इन हिमालय के जल स्रोतों के अस्तित्व को बरकरार रखने के लिये नदियों को भी बचाये रखना आवश्यक है। कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि नदियों को बचाये रखने के लिये हिमालय को भी पहले बचाना होगा। यानि दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। लेकिन बांधों में बाँध कर नदियों को बचाने का काम नहीं किया जा सकता। हिमालय की छोटी-बड़ी सैंकड़ों झीलें भी वहां के लोगों के लिये मुख्य जल स्रोत हैं। इनमें 12 महीने पानी की उपलब्धता भूमिगत जल भंडारों के कारण ही है। इनके अलावा छोटे नाले, गधेरे भी छोटे स्तर पर हिमालय के जल स्रोतों में शुमार हैं।

नगरों का जल-मल से लेकर सारा कचरा नदियों में प्रवाहित होने से प्रदूषण लगातार बढ़ रहा है

नगरीय सीवेज का प्रदूषण

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि चाहे मैदान हों या पहाड़, सभी जगहों पर नगर व कस्बे नदियों के किनारे बसे हैं इन नगरों का जल मल से लेकर सारा कचरा नदियों में प्रवाहित व डंप किये जाने से इनका प्रदूषण लगातार बढ़ कर प्रकृति के इस अहम जल स्रोतों को प्रदूषित कर रहा है। गंगा, यमुना और चिनाव, रावी, ब्यास ब्रह्मपुत्र, कोसी, शारदा, गंडक, घग्गर आदि की बात करें तो साफ पता चलता है कि प्रदूषण से इनके अस्तित्व पर कितना बड़ा खतरा पैदा हो चुका है लिखने या बताने की जरूरत नहीं है। नमामि गंगे जैसी हजारों करोड़ की गंगा शुद्धिकरण योजना से ही इनकी असलियत समझी जा सकती है।

हिमालय के परंपरागत जल स्रोतों को बचाने के लिये कुछ पर्यावरण विद् इसके लिये अलग से नीति बनाने की मांग कर रहे हैं। लगभग चार साल से हिमालय दिवस पर इस बाबत कार्यक्रम आयोजित करने व नीतिगत प्रस्ताव पास करके सरकार को सोंपने की एक सकारात्मक शुरूआत हुई है। हर साल 10 सितंबर को हिमालय दिवस मनाने की शुरूआत हुई है।

संयुक्त वन प्रबंधन, जलागम योजनाएं, वाटरशेड परियोजनाएं व भूमि सुधारीकरण कार्यक्रमों से वनीकरण के जरिये वनाच्छादित क्षेत्र बढ़ाने के कार्य चलाये जा रहे हैं, वन विभाग के जरिये भी बनो के काटने से खाली हुए इलाकों में वनीकरण योजनाएं कागजों पर अधिक और धरातल पर कम प्रतीत हो रही हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि इनको यदि इमानदारी से लागू कर लिया जाये तो वन व वनस्पतियां मिट्टी बचा कर हिमालय को बचाना संभव है, हिमालय बच गया तो इसके सभी जल स्रोत भी संरक्षित हो सकेंगे।

संपर्क करें:
एस. एस. सैनी
प्रभारी संवाददाता राष्ट्रीय सहारा
560, चाव मंडी निकट
रा., इंटर कालेज,
रुड़की-247667;
मो.न.9927223309